भगवान् महावीर और उनके द्वारा संस्थापित नैतिक मूल्य

—डॉ० रामजीराय, आरा

जैन दर्शन के अध्येता की दृष्टि में भगवान् महावीर की मौलिक देन है—अनेकान्तवाद। इसलिए जहाँ कहीं भी प्रसंग आया है, इस विषय पर विशदता से प्रकाश डाला गया है। वैचारिक क्षेत्र में अनेकान्तवाद एक महत्वपूर्ण तत्व है, इसे हम किसी भी स्थिति में नकार नहीं सकते। किन्तु इस सार्वभौम तथ्य के अतिरिक्त भगवान् महावीर ने एक ऐसा भी तत्त्व दिया था, जो आचार क्षेत्र में गृहस्थ समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी है। सामान्यतः हर दर्शन प्रणेता अपने अनुयायियों के लिए आचार का निरूपण करता है। किन्तु गृहस्थ समाज के लिए अतिरिक्त रूप से नैतिकता का चिन्तन देने वाले भगवान् महावीर ही थे। वर्तमान परिस्थितियों के सन्दर्भ में भगवान् महावीर का वह चिन्तन जन-जन को नया आलोक देने वाला है।

मानवीय सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव समाज में कुछ ऐसी वृत्तियाँ पनपने लगीं जो मनुष्य के आचार को खतरा पहुँचाने वाली थीं। इन वृत्तियों के मूल में व्यक्ति की स्वार्थ-भावना अधिक काम करती है। इसलिए मनुष्य वैयक्तिक स्वार्थ का पोषण करने के लिए दूसरों को सताना, झूठे आरोप लगाना, झूठी साक्षी देना, व्यापार में अप्रामाणिक व्यवहार करना, संग्रह करना आदि-आदि प्रवृत्तियों में सक्रिय होने लगा। इस सक्रियता से नैतिक मानदण्ड टूट गये। फलतः वही व्यक्ति पूजा, प्रतिष्ठा पाने लगा जो इन कार्यों के द्वारा अर्थोपार्जन करके अपने समय की समस्त सुविधाओं का भोग करता था।

भगवान् महावीर के युग में भी नैतिक मूल्य स्थिर नहीं थे। नैतिकता के मूल्य ही जब विस्थापित हो गये तब अमानवीय व्यवहारों पर रोक भी कैसे लगाई जा सकती थी? मूल्य की स्थापना की कसमकस के समय एक ऐसी आचार संहिता की अपेक्षा थी, जो नैतिकता की हिलती हुई नींव को स्थिर कर सके।

भगवान् महावीर इस स्थिति से अनजान नहीं थे। क्योंकि उनके पास अव्याबाध ज्ञान था। उन्होंने मुनि धर्म (पाँच महाव्रतों) की प्ररूपणा करके जीवन-विकास के उत्कृष्ट पथ का संदर्शन किया। किन्तु हर व्यक्ति में उस पर चलने की क्षमता नहीं होती, इसलिए उन्होंने अणुव्रतों की व्यवस्था की है। स्थानांगसूत्र में उन अणुव्रतों का नामोल्लेख करते हुए लिखा गया है—पंचाणुव्वता पन्नत्ता, तं जहा—थूलातो पाणाइवायातो वेरमणं, थूलातो मुसावायातो वेरमणं, थूलातो अदिन्नादानातो वेरमणं, सदार संतोसे, इच्छा परिमाणे।

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह एक मानवीय दुर्बलता है कि मनुष्य व्रत स्वीकार करने के बाद भी स्खलित हो जाता है, इसलिए भगवान् ने व्रतों के अतिचारों का विश्लेषण करके व्यक्ति को व्रतों के पालन की दिशा में और अधिक जागरूक बना दिया।

प्रथम अणुव्रत स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत स्वीकार करने वाले व्यक्ति के लिए उस व्रत के पाँच अतिचार ज्ञातव्य हैं, किंतु आचरणीय नहीं हैं। जैसे—

१. **बन्ध**—क्रोधवश, त्रस जीवों को गाढ़ बन्धन से बाँधना।

२. **वध**—निर्दयता से किसी जीव को पीटना।

३. **छविच्छेद**—कान, नाक आदि अंगोपांगों का छेदन करना।

४. **अतिभार लादना**—भारवाहक मनुष्य, पशु आदि पर बहुत अधिक भार लादना।

५. **भक्त-पान-विच्छेद**—अपने आश्रित जीवों के आहार-पानी का विच्छेद करना।

स्थूल मृषावाद विरमण व्रत के पाँच अतिचार ज्ञातव्य हैं—

१. **सहसा अभ्याख्यान**—सहसा किसी के अन-होने दोष को प्रकट करना।

२. **रहस्य अभ्याख्यान**—किसी के मर्म का उद्-घाटन करना।

३. **स्वदार-मन्त्र-भेद**—अपनी स्त्री की गोपनीय बात का प्रकाशन करना।

४. **मृषा उपदेश**—मोहन, स्तम्भन, उच्चाटन आदि के लिए झूठे मन्त्र सिखाना।

५. **कूटलेखकरण**—झूठा लेखपत्र लिखना।

स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत के पाँच अति-चार हैं—

१. **स्तेध**—चोर की चुराई हुई वस्तु लेना।

२. **तस्कर प्रयोग**—चोर की सहायता करना।

३. **विरुद्ध राज्यातिक्रम**—राज्य द्वारा निषिद्ध व्यापार करना।

४. **कूट तौल, कूट माप**—कम तौल-माप करना।

५. **तत्प्रतिरूपक व्यवहार**—अच्छी वस्तु दिखा-कर खराब वस्तु देना, मिलावट करना।

स्वदार संतोष व्रत के पाँच अतिचार ज्ञातव्य हैं—

१. **इत्वरिक परिगृहीत गमन**—अल्प समय के लिए क्रीत स्त्री के साथ भोग भोगना अथवा अपनी अल्पवय वाली स्त्री के साथ भोग करना।

२ **अपरिगृहीत गमन**– अपनी अविवाहित स्त्री (वाग्दत्ता)के साथ भोग भोगना अथवा वेश्या आदि के साथ भोग भोगना।

३. **अनंग क्रीड़ा**—कामविषयक क्रीड़ा करना।

४. **पर-विवाहकरण**—दूसरे के बच्चों का विवाह कराना।

५. **कामभोग तीव्राभिलाषा**—अपनी स्त्री के साथ तीव्र अभिलाषा से भोग भोगना।

इच्छा परिमाण व्रत के पाँच अतिचार हैं—

१. **क्षेत्र**–वास्तु आदि के प्रमाण का अतिक्रमण करना।
२. **हिरण्य**—सुवर्ण ,, ,, ,,
३. **द्विपद**—चतुष्पद ,, ,, ,,
४. **धन**—धान्य ,, ,, ,,
५. **कुप्य** ,, ,, ,,

ये पांचों ही अणुव्रत नैतिक आचार-संहिता के आधार स्तम्भ है। इनके आधार पर अपनी जीवन पद्धति का निर्माण करना ही भ्रष्टाचार की बढ़ती हुई समस्या का सही समाधान है। प्रत्येक युग के सत्तारूढ़ व्यक्ति भ्रष्टाचार-उन्मूलन के लिए नए-नए विधानों का निर्माण करते हैं। किन्तु जब वे विधान स्वयं विधायकों द्वारा ही तोड़ दिए जाते हैं तब दूसरे व्यक्ति तो उनका पालन करेंगे ही क्यों ?

एक बात यह भी है कि राज्य की दृष्टि में वही कर्म भ्रष्टाचार की कोटि में आता है, जिससे राजकीय स्थितियों में उलझन पैदा होती है। किंतु सच तो यह है कि भ्रष्टाचार कैसा भी क्यों न हो तथा किसी भी वर्ग और परिस्थिति में हो उसका प्रभाव व्यापक ही होता है। भ्रष्टाचार की जड़ों को उखाड़ने के लिए व्यक्ति में नैतिकता के प्रति निष्ठा के भाव पनपाने होंगे, क्योंकि निष्ठा के अभाव में वृत्तियों का संशोधन नहीं हो सकता और

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्तियों की स्वस्थता बिना मानव समाज भी स्वस्थ नहीं हो सकता।

भगवान् महावीर ने व्रतों की जो व्यवस्था दी, उसमें वैयक्तिक हितों के साथ सामाजिक और राजनैतिक हितों को भी ध्यान में रखा गया है। प्रथम व्रत के अतिचारों में मानवतावाद की स्पष्ट झलक है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के प्रति निर्दयतापूर्ण व्यवहार करे यह मानवीय आचार संहिता का उल्लंघन है। इसलिए मैत्री भावना का विकास करके समग्र विश्व के साथ आत्मीयता का अनुभव करना प्रथम व्रत का उद्देश्य है।

दूसरे व्रत के अतिचारों में सामूहिक जीवन की समरसता में बाधक तत्वों का दिग्दर्शन कराया गया है। तीसरे व्रत में राष्ट्रीयता की भावना के साथ व्यावसायिक क्षेत्र में पूर्ण प्रामाणिक रहने का निर्देश दिया गया है। चौथे व्रत में कामुक वृत्तियों को शान्त करने के उपाय हैं और पाँचवें व्रत में इच्छाओं सीमित करने का संकल्प लेने से अर्थाभाव, मँहगाई और भुखभरी को लेकर जनता में जो असन्तोष फैलता है, वह अपने आप शांत हो जाता।

अपने आपको भगवान् महावीर के अनुयायी मानने वाले जैन लोग भी यदि इस नैतिक आचार संहिता के अनुरूप स्वयं को ढाल सकें तो वर्तमान समस्याओं को एक स्थायी और सुन्दर समाधान मिल सकता है।

भगवान् महावीर के इस सिद्धान्त का उत्तरवर्ती आचार्यों ने भी प्रसार किया है। समन्तभद्र, सोमदेव, वसुनन्दि, अमितगति, आशाधर, पूज्यपाद आदि आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में श्रावक के बारह व्रतों और ग्यारह प्रतिमाओं का विशद् विश्लेषण किया है। आचार्य वसुनन्दि ने अपने ग्रन्थ वसुनन्दि श्रावकाचार में लिखा है—'लोहे के शस्त्र तलवार, कुदाल आदि तथा दण्ड और पाश आदि को बेचने का त्याग करना, झूठी तराजू और झूठे मापक पदार्थ नहीं रखना तथा क्रूर प्राणी बिल्ली, कुत्ते आदि का पालन नहीं करना अनर्थ दण्ड-त्याग नामक तीसरा अणुव्रत है।' (वसुनन्दि श्रावकाचार, श्लोक ५१६)

'शारीरिक शृंगार, ताम्बूल, गन्ध और पुष्प आदि का जो परिमाण किया जाता है, उसे परिभोग निवृत्ति नामक द्वितीय शिक्षाव्रत कहा जाता है।

'पर्व, अष्टमी, चतुर्दशी आदि को स्त्री-संग त्याग तथा सदा के लिए अनंग-क्रीड़ा का त्याग करने वाले को स्थूल ब्रह्मचारी कहा जाता है।'

इस प्रकार श्रावक धर्म की प्ररूपणा के माध्यम से एक सार्वजनिक आचार-संहिता देकर भगवान् महावीर ने अनैतिकता की धधकती हुई ज्वाला में भस्म होते हुए संसार का बहुत बड़ा उपकार किया है। भगवान् महावीर के इस चिंतन के आधार पर ही वर्तमान में आचार्यश्री तुलसी ने अणुव्रत आन्दोलन के रूप में एक नई आचार-संहिता का निर्माण किया है। लगता है कि अब और तब की स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं था। इसीलिए भगवान् महावीर का वह चिन्तन इस युग के जनमानस के लिए भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहा है। ○

□□ अहिंसा की विशिष्टता □□

यह भगवती अहिंसा प्राणियों के, भयभीतों के लिए शरण के समान है, पक्षियों को आकाशगमन के समान हितकारिणी है, प्यासों को पानी के समान है, भूखों को भोजन के समान है, समुद्र में जहाज के समान है, चौपायों के लिए आश्रम (आश्रय) के समान है, रोगियों के लिए औषधियों के समान है और भयानक जंगल के बीच निश्चिन्त होकर चलने में सार्थवाह के समान सहायक है।

—भगवान महावीर (प्रश्नव्याकरण)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org